जहाँ चाह वहाँ राह

(शिक्षा संबन्धित केस-स्टडीज़ का संकलन)

सर
दोराबजी
टाटा ट्रस्ट

सोसायटी फॉर ऑल राउण्ड डेवेलपमेन्ट

क्षेत्रीय कार्यालय, रामबाग़, डीग

सोसायटी फॉर ऑल राउण्ड डेवेलपमेन्ट

सन् 2005

मुख्यालय :
311, कीर्तिद्वीप, कामर्शियल कॉम्पलेक्स,
नांगल राया, नई दिल्ली – 110046
फोन नं. : 011–28524728
फैक्स : 011–28521962
e_mail: sard@bol.net.in,
sa_rd@hotmail.com
Website: www.sardindia.org

क्षेत्रीय कार्यालय :
रामबाग, नगर रोड़, डीग
जिला भरतपुर (राजस्थान)
फोन नं. : 05641–224173

प्रकाशन हेतु वित्तीय सहयोग :
सर दोराबजी टाटा ट्रस्ट

सहयोग राशि : 25 रूपये मात्र

संकलन

प्रदीप कुमार,, हैदर रिजवी, किश्वर खान, ऑर्घो मुखर्जी, रंजीत सिंह, महेन्द्र सिंह, मीना सिंघल, मुकेश कौशिक सुनील राजोरिया, दुलीचन्द शर्मा, मुकेश सिंह, सोहन सिंह, जनार्दन सिंह, सुखराम, जमशैद खान, रज्जो सिंह, बच्चू सिंह, राजेश सिंह, फख़रूद्दीन, देवीसिंह, दशरथ सिंह, खेमचन्द डांगी, संदीप दुआ, इकबाल खान, नरेन्द्र कुमार, श्री भगवान, मो. साहून, अखतर खान, जफ़रू खान, गोपाल सिंह, मुखिया सिंह, मानसिंह, साहून खान, आसम खान, साहब खान, आसूबी बानो, मों शाहिद, जुबैर,, सुनील दत्त ,गुलाब चन्द सैन, मनफूल सैनी, बृज बिहारी सिंह, शिवशंकर झा, संजय प्रिय, देवेन्द्र कुमार पाण्डेय, अमित रावत एवं समस्त शिक्षा समूह।

सुन्दर

(घौघोर गाँव का एक शरारती बालक)

'सुन्दर' केवल उसका नाम ही नही है। वास्तव में भी वह बहुत सुन्दर है। गठीला बदन, सुनहरे बाल, साफ़ रंग और उस पर काली-काली आँखें उसकी खूबसूरती में चार चाँद लगाती हैं। सुन्दर 'हमारी पाठशाला, घौघोर' में पढ़ने वाला 9 वर्ष का एक बालक है। वह हाजिर जवाब ही नही बल्कि तीव्र बुद्धि वाला भी है। लेकिन पढ़ने से वह हमेशा जी चुराता था। उसे तो बस दिन भर शरारत करने, दूसरे बच्चों से छेड़ख़ानी करने और उनकी नकले उतारने में बड़ा आनन्द आता था। जनार्दन को इस बात की चिन्ता रहती थी कि आख़िर ऐसा क्या किया जाए जिससे सुन्दर की आदतों को छुड़ाया जा सके। एक दिन जनार्दन बच्चों को चित्र-कार्ड दिखा रहा था सुन्दर ने मौक़ा मिलते ही सामने बैठे बच्चों को मुँह चिढ़ाने लगा। जनार्दन ने उसे यह सब करते हुए देख लिया। उसने तुरन्त एक चित्र-कार्ड हाथ में लिया और बच्चों को दिखाकर पूछा "बच्चों बताओ मेरे पास किसका चित्र है?" "बन्दर को है मास्साब" सभी बच्चों ने एक साथ जवाब दिया।"बहुत अच्छे, अच्छा यह बताओं कि चित्र में बन्दर क्या कर रहा है?" जनार्दन ने पूछा। "दाँत निकाल रो है मास्साब" बच्चों ने उत्तर दिया।"हाँ, देखो बन्दर कैसे करता है, मैं तुम्हें करके दिखाता हूँ" जनार्दन बन्दर की तरह जीभ निकाल कर मुँह चिढ़ाने लगा। मास्टरजी को बन्दर की नकल करते देख सभी बच्चे ज़ोर से हँस पड़े। जनार्दन ने बच्चों को भी उसकी नकल करने को कहा। बस फिर क्या था सारे के सारे बच्चे एक दूसरे को बन्दर की तरह मुँह चिढ़ाने लगे।

सुन्दर यह सब देख पहले तो थोड़ा सा झिझका लेकिन कुद देर बाद वह सहज हो गया और अन्य सभी बच्चों के साथ गतिविधि में शामिल भी हो गया।

जनार्दन अब आए दिन किसी न किसी जानवर की नकल करके दिखाने लगा। बच्चों के लिए अब यह आम बात हो चली थी। इसीलिए सुन्दर का तरह-तरह से मुँह चिढ़ाना उन्हें अब सामान्य सा लगने लगा। उन्हें अब सुन्दर की हरकते बुरी नही लगती थी। यदि कभी वह चिढ़ाता भी था बच्चे उल्टे उसी की नकल करने लगते थे।

इसी बीच जनार्दन ने सुन्दर के एक शौक को पहचान लिया। वह अक्सर दबी ज़बान में 'सिंघलवाटी (स्थानीय लोकगीत) गीत गुनगुनाता रहता था। उसकी आवाज़ बहुत सुरीली थी। जनार्दन ने उसकी इस प्रतिभा को उभारने के लिए उसे कक्षा में बार-बार अवसर दिए तथा बच्चों से तालियाँ बजवाकर उसका उत्साहवर्द्धन भी किया। शिक्षक एवं साथी बच्चों के द्वारा मिले इस सम्मान से उसमें एक आत्मविश्वास का उदय हुआ, उसकी झिझक टूटने लगी और वह खुलकर गीत सुनाने लगा। उसकी आवाज़ पर सहपाठी झूम उठते और ज़ोरदार तालियाँ बजाते थे। थोड़े ही दिनों में सुन्दर पाठशाला का प्रिय बालक बन गया। उसने अपनी सभी शरारतों को छोड़ दिया और पढ़ाई की ओर मन लगा लिया।

भयभीत जुगतो

मोनाका, पहाड़ की तलहटी में बसा लगभग 300 की आबादी वाला एक छोटा सा गाँव है। जिसमें गुर्जर समुदाय के लोग रहते हैं। यहाँ का मुख्य व्यवसाय कृषि है। गाँव में एक राजकीय प्राथमिक विद्यालय है जिसमें केवल एक शिक्षक है। समुदाय की माँग पर सार्ड ने इस विद्यालय के परिसर में एक पाठशाला की शुरूआत की। देवेन्द्र और जोगेन्द्र के साथ उनका छोटा भाई जुगतो भी पाठशाला में पढ़ने आता था। एक दिन सरकारी शिक्षक ने एक बालक को प्रश्न का उत्तर न देने के कारण बहुत ज़ोर से पीट डाला। ये डरावना दृश्य जुगतो सहित सभी बच्चों ने देखा। इस घटना ने जुगतो को इतना डरा दिया उसने विद्यालय आना ही बन्द कर दिया।

दूसरे दिन सार्ड शिक्षक राजेश जुगतो के घर संपर्क के लिए गया। संयोग से जुगतो भी घर पर ही था। राजेश को घर आता देख जुगतो कोठे में छिप गया। राजेश ने जब जुगतो के बारे में उसकी माँ से बातचीत की तो उसने कहा, "मास्टर ऊ तो यों केहेय वहाँ तो मार लगे है, तिहारे डर के मारें कोठे में दुबक गयो है।" इस पर देवेन्द्र और जोगेन्द्र ने माँ से कहा, "अम्मा ये मास्साब न पीटें ऊ तो सिरकारी मास्टर पीटे है।" सारी बात समझने के बाद माँ ने कहा कि कल वह स्वयं जुगतो को स्कूल छोड़ने आयेगी।

दूसरे दिन उसकी माँ जुगतो को साथ लेकर पाठशाला आई। शिक्षक ने जुगतो प्यार से बैठाया और उसे अच्छे-अच्छे गीत सुनाए।

उसके बाद राजेश ने बच्चों को 'झूम रे पत्थर झूम' नामक खेल खिलाया। जुगतो को यह खेल बहुत पसन्द आया।

दूसरे दिन भी जुगतो पाठशाला आया लेकिन वह अभी भी कुछ सहमा-सहमा सा था। धीरे-धीरे ने राजेश उसे उसका नाम लिखना सिखाया। जुगतो को बहुत अच्छा लगा। अब उसे विशवास होने लगा कि यहाँ उसकी पिटाई नही होगी और वह पाठशाला के सहज वातावरण में घुल-मिल गया।

भूरा भाई गोल मटोल

भूरा का वास्तविक नाम ''लुकमान'' है। मोटा होने के कारण उसे उठने-बैठने में परेशानी होती है। इसलिए पाठशाला में कई बार वह जमीन पर लेट भी जाता था। उसकी इन आदत के चलते सभी बच्चे उसे भूरा भाई गोल मटोल कह कर चिड़ाते है। यही कारण था कि उसने पाठशाला आना बन्द कर दिया। सोहन सिंह जब उसे घर से बुलाने जाता तो वह चारपाई के नीचे छिप जाता। उसकी माँ कहती, ''मास्साब याये कोई तरियां ते ले जाओ यहाँ सब दिन खावे कू चहिये स्कूल जायगो तो कछु सीखेगो, नेक चलेगो फिरेगो तो सही।'' शिक्षक के आते ही वह हाथ में रोटी लिए कौने में दुबक जाता।

एक दिन सोहन सिंह को भूरा सड़क पर खेलता मिला। उसके पास सरकण्डे की बनी एक गाड़ी थी, जिसमें एक ट्राली भी लगी थी। सोहन सिंह ने भूरा की गाड़ी की बड़ी तारीफ की तथा उससे कहा भी वह अन्य सभी बच्चों को भी ऐसी गाड़ी बनाना सिखाए। भूरा ने कहा " मास्साब मैं न जाऊँ, मोए छोरा चिढ़ावें है।" सोहन सिंह ने कहा कि यदि वह उनको गाड़ी बनाना सिखयेगा तो कोई उसे नही चिढ़ायेगा। और वास्तव में उसने पाया कि बच्चे उसकी गाड़ी को देखकर उसके मोटापे को भूल गए। सभी बच्चों की यही कोशिश थी कि जल्दी से जल्दी भूरा से गाड़ी बनाना सीख जाए।

भूरा ने सभी को गाड़ी बनाना सिखाया। लेकिन कक्षा में बैठे- बैठे लेट जाने वाली उसकी आदत अभी भी नही छूटी थी।

सोहन सिंह उससे कुछ नहीं कहता जो मर्जी आये वो करे ''खुशी इस बात की थी वो कम से कम पाठशाला आने लगा।'' वह अन्य बच्चों की तरह एक ही नहीं, बल्कि कई-कई स्लेट उठाता, चॉक, तीलियाँ लेता और सबसे मिलकर कुछ न कुछ बनाता रहता था। सोहन सिंह उसकी प्रत्येक गतिविधि पर नज़र रखता था। साथ ही आवश्यकता पड़ने पर कुछ सुधार करवाता रहा। भूरा को पता ही नहीं चला कि वह कब चित्रों में रंग भरना, तीलियाँ जमाना और अपना नाम लिखना सीख गया। पहले की तरह सारे दिन कक्षा में लेटे रहना तथा हाथ में रोटी लिए फिरना भी उसने छोड़ दिया।

काडू की कहानी

आदिबद्री तीर्थ स्थल के पास एक छोटा सा गाँव है, 'अलीपुर खोहरी'। लगभग 150 की आबादी वाले इस गाँव के सभी परिवार गुर्जर समुदाय से हैं। ये परिवार मूल रूप से अलीपुर गाँव के है जो लगभग 1 कि. मी. दूर स्थित है। प्राथमिक विद्यालय भी अलीपुर में ही है। दूरी अधिक होने के कारण बच्चे स्कूल तक नही पहुँच पाते और दिन भर खेलते रहते हैं। बच्चों के स्कूल न जाने का दूसरा कारण समुदाय में शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव भी है। तीर्थ स्थल के पास होने के कारण यहाँ से तीर्थ यात्री भारी संख्या में गुज़रते हैं। बस, बच्चे इन्हीं सैलानियों की गाडियों के पीछे-पीछे भागते रहते हैं। आदिबद्री में भंडारा होता है। वहाँ से प्रसाद लेकर खाते रहते हैं। बस यही उनका जीवन है। समुदाय की आवश्यकता एवं माँग को ध्यान में रखते हुए संस्था ने यहाँ पाठशाला की शुरूआत की जिसके लिए स्थान की व्यवस्था समुदाय ने की। शिक्षक फ़क़रूद्दीन ने समुदाय में संपर्क करके बच्चों का नामांकन किया। शिक्षण कार्य शुरू हो गया। फ़क़रूद्दीन की मेहनत से खोहरी की पाठशाला व्यवस्थित हो गई। लेकिन कुछ बच्चे थे जो अभी भी पाठशाला से दूर थे।

काडू उन्हीं बच्चों में से एक था। बहुत ही शरारती, माँ-बाप की भी नही सुनता था। साथ ही दूसरे बच्चों के साथ छेड़खानी करने और उनको डराने में उसे बड़ा मज़ा आता था। उसके पिता लिखमी सिंह बहुत परेशान रहते थे। वह कई बार तो तंग आकर उसका खाना-पीना तक बन्द करवा देते थे या फिर उसे एक माटे से रस्से से बाँध देते थे।

एक दिन काडू की माँ फ़क़रूद्दीन के पास आई और हाथ जोड़ कर कहने लगी कि "मास्साब मेरे काडू को सुधार दो, चाहे याके बदले कछु ले लेओ। मोपे बाकी पिटाई न देखी जाए। वा में भी इन बच्चान की तरियां लक्खन पाड़ दो।"

फ़क़रूद्दीन ने काडू की पूरी कहानी सुनी। उसे लगा कि काडू को वास्तव में प्यार व दुलार की जरूरत है। पाठशाला की छुट्टी होने के बाद फ़क़रूद्दीन ने काडू की हर गतिविधि पर नजर रखना शुरू कर दिया।

उसने देखा कि काडू के कुछ विशेष शौक हैं। खेतों में तितली पकड़ना, पहाड़ों पर दौड़ लगाना, बेर तोड़कर खाना उसे अच्छा लगता था। एक दिन फ़क़रूद्दीन भी उसके साथ हो लिया। काडू के साथ वह भी पहाड़ चढ़ कर बेर तोड़े और काडू को भी खिलाए। तितलियाँ पकड़ने के लिए फ़क़रूद्दीन ने मना कर दिया। उसने काडू से कहा कि तितलियाँ भी हमारी तरह एक जीव हैं। इन्हे भी उतनी ही तकलीफ होती है जितनी कि हमें। काडू ने फ़क़रूद्दीन को बताया कि जब उसके पिता उसे मारते हैं तो उसे बहुत दर्द होता है। फ़क़रूद्दीन ने काडू को बहुत सी कहानियाँ सुनाईं। आहिस्ता-आहिस्ता काडू को अहसास होने लगा कि फ़क़रूद्दीन उसका अच्छा दोस्त है।

शुक्रवार के दिन फ़क़रूद्दीन पाठशाला के सभी बच्चों को लेकर पहाड़ पर पहुँचा। उसने काडू को भी घर से बुलवा लिया। सभी बच्चो ने उस दिन खूब मौज-मस्ती की । बेर तोड़कर खाए, बद्रीधाम के दर्शन किए, नये फूलो की जानकारी ली, फूलों पर मँडरा रही तितलियों के जीवन के बारे में जाना। काडू को लगा कि उसे भी यह सब जानना चाहिए। उसने फ़क़रूद्दीन को कहा कि कल से वह भी पाठशाला आयेगा। इस प्रकार काडू सहज रूप से पाठशाला से जुड़ गया।

मज़दूर बालक

ज़िला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम के साथ संकुल संदर्भ केन्द्र, खोह पर सार्ड द्वारा चलाए जा रहे समंवित शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत संस्था ने सरकारी विद्यालयों में सीधे ही अकादमिक सहायता पहुँचाने के उद्देश्य से प्रथम वर्ष में पाँच सरकारी विद्यालयों का चयन किया है। इन पाँचों स्कूलों में सार्ड कार्यकर्ता द्वारा प्रदर्शन कक्षाएँ ली जाती हैं। राजकीय प्राथमिक विद्यालय, नगला मेहरानियाँ उन्हीं में से एक विद्यालय है। जवाहर सिंह इसी गाँव का रहने वाला एक बालक है।

जवाहर सिंह, शारीरिक विकृति से ग्रसित है। ग़रीबी व अशिक्षा के कारण उसके पिता ने उसे अपने साथ खेत पर मज़दूरी के लिए ले जाना शुरू कर दिया।

समुदाय संपर्क के दौरान प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका, रविबाला को जवाहर के बारे में पता चला। रविबाला ने एक दिन शाम के समय जवाहर से भेंट की और पूछा "स्कूल क्यों नहीं आते हो।" उसका जबाब था "पिताजी पढ़वे कू नाय भिजावें" जवाहर के मन में पढ़ने के प्रति रुचि को देख रविबाला ने उसके पिता बद्दे सिंह से सम्पर्क किया और जवाहर को पढ़ाने की बात कही। लेकिन उसके पिताजी ने कहा, "अरे बहनजी कहूँ नाय मास्टर होय पढ़ाई ते, गल्लेन पढ़े-लिखे वैसे ही डोल रहें हैं। पढ़ने के बाद नौकरी नहीं लगी तो मजदूरी भी नाय करेगो।" इस पर रविबाला ने उसे समझाया कि पढ़ाई का अर्थ केवल नौकरी करना नहीं है। मज़दूरी का हिसाब-किताब रखने, अच्छी-अच्छी किताबें पढ़ने, नई- जानकारियाँ हासिल करने के लिए भी पढ़ना आवश्यक है। रविबाला ने कहा, "इसकी जिन्दगी खराब नहीं करो, इसकी पढ़ने की इच्छा है और स्कूल में किताब आदि निःशुल्क मिलती हैं।"

काफी मशक्कत के बाद बद्दे सिंह मान तो गया लेकिन बेटे को स्कूल फिर भी नहीं भेजा। लगभग छुट्टी के समय जवाहर अपने पिताजी से छिपते हुए स्कूल आया।

रविबाला को यह जानकर बड़ा दुख हुआ रविबाला ने एक बार फिर उसके पिता से सम्पर्क करने की योजना बनाई। अगले दिन रविबाला सार्ड कार्यकर्ता मुकेश कौशिक को साथ लेकर जवाहर के घर पहुँची। संयोग से जवाहर के पिताजी घर पर ही थे। मुकेश ने बद्दे सिंह को शिक्षा का महत्व समझाया साथ ही जवाहर की शरीरिक विकृति के परामर्श हेतु सार्ड द्वारा सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, में चलाए जा रहे फीजियोथैरेपी केन्द्र के बारे में भी विस्तार से बताया। बद्दे सिंह मन ही मन यह जानकर बहुत खुश हुआ कि उसका बेटा ठीक हो सकता है। साथ ही बेटे की पढ़ाई के प्रति ललक को देख वह जवाहर को स्कूल भेजने को राजी हो गया।

अगले दिन जवाहर सिंह अपने पिताजी के साथ नहा-ध ोकर, साफ कपड़े पहनकर बड़े खुशी-खुशी विद्यालय आया। उसका चेहरे से साफ़ झलक रहा था कि जैसे उसकी कोई बड़ी मनोकामना पूरी हो गई हो। जवाहर अब न केवल स्वयं नियमित रूप से विद्यालय आता है बल्कि अपनी छोटी बहन को भी साथ लाता है।

इस प्रकार रविबाला और मुकेश के संयुक्त प्रयास से जवाहर सिंह का सपना साकार हुआ। जवाहर की इच्छा है कि वह खुब पढ़े और अपने माँ-बाप का सहारा बने।

नई दिशा

राजकीय प्राथमिक विद्यालय, खोह की पहली कक्षा में पढ़ने वाली एक ६ वर्षीय बालिका 'पिंकी' बिल्कुल शान्तस्वभाव की थी। वह कक्षा में किसी से भी बात नही करती थी। शिक्षक के बार-बार पूछने पर भी किसी बात का जबाब तक नहीं देती। कभी-कभी शिक्षक के ज्यादा पूछने पर रो भी पड़ती थी। कक्षा के सभी बच्चों से एक दूरी बनाए रखती थी। इस सम्बन्ध में विद्यालय के शिक्षक श्री गोविन्द प्रसाद ने बताया कि जब से पिंकी यहाँ पढ़ने आने लगी है तभी से उसका यह व्यवहार देखने में आ रहा है। विद्यालय से भाग जाना उसके लिए आम बात है।

सार्ड कार्यकर्ता मुकेश कौशिक ने पिंकी के पिता से भेंट की। उन्होने बताया कि घर में पिंकी खूब बोलती है और खुश रहती है। अपनी सहेलियों के साथ खूब खेलती है। मुकेश ने पिंकी से बात करना चाहा तो वह भागकर माँ के पास जा छिपी। पिंकी की माँ बताया कि पिंकी अक्सर उससे कहा करती है कि स्कूल में उसे खेलने नही दिया जाता। हर समय मास्टर जी सबक याद करने को कहते हैं। मुकेश ने पिंकी को विश्वास दिलाया कि अब उसके साथ ऐसा नही होगा। वह जब भी खेलना चाहेगी उसे खेलने दिया जायेगा।

प्रदर्शन कक्षा के दौरान मुकेश ने अन्य सभी बच्चों के साथ पिंकी की रुचियों को ध्यान में रखा। शिक्षण कार्य के दौरान अधिक से अधिक खेल आधारित गतिविधियों को शामिल किया। शुरू-शुरू में पिंकी मुकेश से बात करने में कतराती थी लेकिन धीरे-धीरे उसने बातें करना शुरू कर दिया।

मुकेश ने उसके लिए अलग से भी समय दिया करता था। कभी-कभी उससे मिलने घर पर भी जाता था। उसके पिता से मिलकर उसकी प्रगति के बारे में चर्चा करता। बातों ही बातों में उसकी तारीफ भी किया करता था।

पिंकी को यह सब अच्छा लगा। अब तक वह लगभग सहज हो चुकी थी। उसने विद्यालय भी नियमित रूप से आना शुरू कर दिया। स्कूल के शिक्षकों ने भी पिंकी के इस व्यवहार को महसूस किया। उन्होने भी सार्ड की विद्या को अपनाना शुरू किया। अपनी दैनिक कार्य-योजना में खेल आधारित गतिविधियों को स्थान दिया। शिक्षा संबन्धी अवधारणाओं को स्पष्ट करने के लिए नई-नई शिक्षण-अधिगम सामग्री का प्रयोग करना शुरू किया। कुछ समय बाद गोविन्द प्रसाद ने देखा कि पिंकी उसके द्वारा कराई गई सभी गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले रही है। केवल मात्र चार माह में ही पिंकी की यह स्थिति हो गई कि जब भी कक्षा में शिक्षक कोई प्रश्न पूछते हैं तो सबसे पहले पिंकी अपना हाथ ऊपर उठाती है। कविता सुनाने का उसका अपना अलग ही अन्दाज है। जितनी भी शिक्षण-अधिगम सामग्री उसकी कक्षा में उपलब्ध है वह सभी का प्रयोग करना भली भाँति जानती है। अपनी सहेलियों को भी वह करके दिखाती है।

विकास की राह पर

लखन की उम्र उस समय ३ वर्ष की थी जब उसके पिता की एक दुर्घटना मृत्यु हो गई। तबसे लखन की माँ पर दुःखों का पहाड़ टूट पड़ा। माँ के मज़दूरी पर चले जाने के बाद लखन को संभालने वाला कोई नही था। दिनभर अकेले रहने कारण उसे कुद बुरी आदतों की लत पड़ गई।

सार्ड द्वारा गाँव में घर-घर जाकर किए गए सर्वेक्षण में शिक्षा से वंचित बच्चों की सूचि में लखन का नाम भी था। लखन को पाठशाला से जोड़ने के उद्देश्य से शिक्षक सुखराम जब उसकी माँ से मिला तो उसकी माँ रो पड़ी और कहा "गुरूजी या लखने पढ़ाय देओ ई बस दिनभर बीड़ी पीवे, जयन्ती खावे, याकू पइसा खाँते आवेगो। अब तो बाप नाय रयो हम पे खेत भी नाय कछु इतेक पढ़ले कि हिसाब किताब तो लगाय ले ताकि मजदूरी कर सके और अपनो पेट भर सके।" सुखराम उसकी बात को गंभीरता से लिया और लखन की गलत आदतों को छुड़ाकर पाठशाला तक लाने के लिए मन में ठान लिया।

लखन अपना समय ज्यादातर जंगलों में पेड़ के नीचे बीड़ी पीकर व तम्बाकू खाकर, सोकर, गिलोल से पक्षियों को मारकर बिताया करता था। साथ ही उसे सरकण्डे की गाड़ी चलाने का भी बहुत शौक था। सुखराम ने पाठशाला के समय के बाद उससे वहीं सम्पर्क किया। उसे धूम्रपान से होने वाले नुकसान के बारे में समझाया। लखन सुखराम की बात मान गया। दूसरे दिन वह पाठशाला भी आया। लेकिन अचानक उसके पेट में दर्द उठा और वह कराहने लगा। सुखराम ने उसे एक निजी चिकित्सक को दिखाया।

उसने कुछ दवाई दी। थोड़ी देर में उसे आराम मिल गया। लखन ने बताया कि जब भी बीड़ी पीना छोड़ता है उसके पेट में इसी प्रकार का दर्द होने लगता है। सुखराम ने उसका ध्यान दूसरी ओर बाँटा और कहा कि ऐसा नही है। यह दर्द तो सामान्य है किसी के भी हो सकता है।

सुखराम लखन को पाठशाला में व्यवस्था संबन्धी कुछ ज़िम्मेदारियाँ देना शुरू किया। वह कक्षा की सफाई में शिक्षक का हाथ बँटाता है। पाठशाला का समय समाप्त होने के बाद स्लेट, रंग कार्य-पत्रक आदि को उठाकर रखता है। समय से पहले पाठशाला आकर घण्टी बजाता है। इन सब कार्यों में लखन को बहुत आनन्द आता है। अब उसका मन पढ़ाई में भी लगने लगा है।

लखन ने बीड़ी पीना अभी पूरी तरह नही छोड़ा है। लेकिन सुखराम को विश्वास है कि एक दिन लखन बीड़ी पीना ज़रूर छोड़ देगा। लखन का सपना है कि वह खूब पढ़े और बड़ा होकर माँ के साथ मज़दूरी में हाथ बँटाए।

बकरी कौन चराए

'मोनाका' गुर्जर समुदाय का एक छोटा सा गाँव है। यहाँ का मुख्य धंधा कृषि व पशुपालन है।आर्थिक रूप से पिछड़े इस गाँव में माता-पिता के साथ बच्चों को भी काम धन्धों जैसे खेतों पर मज़दूरी, गाय बकरी चराना आदि में हाथ बँटाना पड़ता है। यही कारण है कि यहाँ शिक्षा का स्तर बहुत निम्न है। माता-पिता बच्चों को पढ़ाने के बजाए उनसे काम-धन्धा करवाना अधिक पसन्द करते हैं। ७ वर्षीय बलबीर की भी यही मजबूरी है। माता-पिता के मज़दूरी पर चले जाने के बाद उसे घर की बकरियाँ चराने जंगल में जाना पड़ता है।

एक दिन भूदेव को बलवीर रास्ते में बकरियाँ ले जाता मिला। भूदेव ने उसे रोका तो उसने बड़े सहज रूप से शिक्षक से कहा ''का काम है जल्दी बता देओ मोय देर है रही है।" भूदेव ने पूछा "तुम पढ़ने क्यों नहीं आते हो" बलवीर बोला "मास्साब इन बकरियाँन ने को चराबेगो" उसने बेझिझक होकर कहा। भूदेव को उसका यह अन्दाज़ बहुत अच्छा लगा। "क्या ऐसा नही हो सकता कि तुम बकरियाँ भी चरा लो और पढ़ भी लो" भूदेव ने उसे सुझाया। "हाँ मास्साब ऐसो तो हो सके" बलबीर को भूदेव का सुझाव पसन्द आया। बलबीर ने बताया कि वह स्कूल में अधिक समय नही दे पायेगा। नही तो उसकी बकरियाँ भूखी रह जायेंगी। आखिर बकरियाँ ही तो उसके दूध का सहारा थीं। भूदेव ने उसे विश्वास दिलाया कि वह उसे अधिक देर तक नही रोकेगा और जल्दी छोड़ दिया करेगा।

अगले दिन बलबीर पाठशाला पहुँच गया। उस दिन भूदेव ने बच्चों को एक कहानी सुनाई। जिसमें भूदेव ने बताया कि एक चमेली नाम की बकरी किस तरह अपने बच्चों की शेर से रक्षा करती है। बलबीर को यह कहानी बहुत अच्छी लगी।

और लगती भी क्यों नही इसमें बकरी की बात जो थी। कहानी सुनने के बाद बलबीर चला गया। भूदेव ने उसे बिल्कुल भी नही रोका। लेकिन जाते वक्त बलबीर से कहा, "कल जरूर आना कल मैं तुम्हे बकरी लिखना सिखाऊँगा"

"मास्टर जी बकरी लिखना सिखयेंगे तो क्या मैं भी अपनी बकरी का नाम लिख सकुँगा" उसने मन ही मन सोचा और निश्चय किया कि कल वह पाठशला अवश्य आयेगा। यही सोचते-सोचते रात वह कब सो गया उसे पता ही नही चला।

सुबह आँख खुलते ही वह जल्दी से तैयार हुआ और सीधा पाठशाला पहुँच गया। भूदेव उसे न केवल बकरी लिखना सिखाया बल्कि बकरी के चित्र में रंग भी भरवाया। उसने भूदेव से रंग माँगे और बकरी के चित्र में रंग भरना शुरू कर दिया।

इस प्रकार भूदेव बलबीर को किसी न किसी नये काम को बताकर उसे पाठशाला बुलाने लगा। बलबीर भी अब तक पाठशाला के रंग में रंग चुका था। लेकिन वह अपनी बकरियों को भूखा भी नही देखना चाहता था।

बलबीर अकेला नही है अभी और भी कई बच्चे हैं जो आर्थिक तंगी के चलते स्कूल आने में असमर्थ हैं।

मुकेश – एक छिपी हुई प्रतिभा

मुकेश कुमारी लगभग १० वर्ष की हो चली थी लेकिन पढ़ाई के मामले में महाचोर। वह न तो खुद पढ़ती और न ही दूसरे बच्चों को पढ़ने देती थी। हर वक़्त कोई न कोई शरारत उसे सूझती रहती थी। बात-बे-बात बच्चों को छेड़ती रहती थी। कभी-कभी तो उनके साथ झगड़ा करने लगती थी। बच्चों को मारने लगती थी। यही नहीं कुएँ से पानी भरकर लाती औरतों के मटके फोड़ कर भाग जाती थी। उसकी इन हरकतों से पूरा गाँव परेशान था। अक्सर गाँव वाले उसके घर शिकायत लेकर आते रहते थे। उसकी माँ प्रहलादी और पिता बच्चू सिंह बेटी की शरारतों को लेकर गाँव वालों से माफ़ी माँगते रहते थे और गाँव वालों के जाने के बाद बेटी की खूब पिटाई भी करते थे। लेकिन मुकेश की आदतों में कोई बदलाव नही आ रहा था। प्रहलादी ने हमारी पाठशाला के शिक्षकों के सामने बेटी की समस्या को रखा तथा किसी भी प्रकार से मुकेश का मन पढ़ाई में लगाने के लिए आगह किया।

सार्ड के शिक्षक जमशेद और दुलीचन्द ने मुकेश की हर गतिविधि का गहराई से अध्ययन किया। और अन्त में उसकी बहुत सी खूबियों और रूचियों को पहचान लिया। मुकेश को अभिनय करने का बहुत शौक था। गाँव की किसी भी महिला या पुरूष की हु-बहु नकल वह कर सकती थी। दुलीचन्द और जमशेद ने कक्षा-कक्ष में अनेक कहानियाँ सुनाई और मुकेश से विभिन्न पात्रों के अभिनय करवाए। मुकेश को देख कर कक्षा के दूसरे बच्चों में भी अभिनय करने का शौक़ पैदा होने लगा। जमशेद और दुलीचनद ने मुकेश को ज़िम्मेदारी सौंपी कि वह अन्य बच्चों को भी अभिनय सिखाए। बस फिर क्या था, कुद ही दिनों में कक्षा-स्थल एक रंगमंच में बदल गया और कक्षा के बहुत से बच्चे कुशल अभिनय करने लगे। शिक्षकों ने मुकेश को इस उपलब्धि का न केवल पूरा श्रेय दिया बल्कि २६ जनवरी के दिन उसे कक्षा की सर्वश्रेष्ठ बालिका का पुरूस्कार भी दिया। मुकेश को यह सब बड़ा अच्छा लगा। अब तक वह अपनी पुरानी बहुत सी शरारतों को भुला चुकी थी। अभिनय सिखाते-सिखाते वह लगभग सभी बच्चों के दोस्ताना रिश्ता कायम कर चुकी थी।

आज मुकेश १२ वर्ष की हो चुकी है तथा कक्षा ३ की में पढ़ रही है। उसका सपना है कि बड़ी होकर एक अच्छी कलाकार बने तथा अपने गाँव का नाम रोशन करे।

दुलीचन्द और जमशेद की समझ से मुकेश की गलत आदतों को दूर को तो करने में मदद मिली ही साथ ही एक छिपी हुई प्रतिभा को उभरने का मौक़ा भी मिला। आज ऐसे ही शिक्षकों की आवश्यकता है जो बच्चों की प्रतिभाओं को पहचाने और उन्हें आगे बढ़ने के पूरे-पूरे अवसर उपलब्ध कराएँ।

खेल-खेल में

रीना राजकीय प्राथमिक विद्यालय, दिदावली में पढ़ने वाली कक्षा ३ की छात्रा है। वह भाट समुदाय बहुल गाँव आज़ाद नगर में रहने वाली १० वर्षिय बालिका है। एक दिन था जब वह स्कूल के नाम से भी कतराती थी। अगर कभी कोई शिक्षक उसे घर से बुला भी लाए या उसकी माँ उसे पाठशाला छोड़ भी जाए तो वह कोई न कोई बहाना बनाकर भाग जाती थी। उसे तो बस दिन भर खेलते रहना अच्छा लगता था।

एक दिन सार्ड शिक्षक सुनील राजोरिया समुदाय संपर्क के समय जब रीना के घर पहुचा तो उसने देखा कि रीना ने ज़मीन पर आयताकार कोई आकृति बनाई हुई थी। उसके के दाँए हाथ में एक ढिकरी (टूटे मटके का एक गोल घिसा हुआ टुकड़ा) थी। जिसे वह सिर के ऊपर उछाल कर पीछे की ओर फेकती और फिर एक टाँग से उछल कर आयताकार आकृति के में बने खानों में चल रही थी। शायद वह कोई नया खेल, खेल रही थी। सुनील को देखते ही उसने खेलना बन्द कर दिया और घर में जाकर छिप गई। उसकी माँ मीनादेवी उसका हाथ पकड़कर उसे बाहर लेकर आई। सुनील ने उससे पूछा "कौन सा खेल खेल रहीं रीना"। रीना ने कोई जवाब नहीं दिया। लेकिन माँ के कहने पर उसने धीरे से कहा "खड्डू-खड्डू"। "खेल तो बड़ा अच्छा है। क्या तुम हमें सिखाओगी?" सुनील ने पूछा। रीना ने हाँ के लिए गर्दन हिलाई। "तो फिर ठीक है तुम पाठशाला आना और हम सबको यह खेल सिखाना" सुनील ने कहा। रीना पहले तो थोड़ा झिझकी लेकिन जब सुनील ने उससे वादा किया कि वह उसे पाठशाला में रोकेगा नही, वह चाहे तो खेल सिखाने के बाद वापस आ सकती है, तो रीना तैयार हो गई।

अगले दिन रीना पाठशाला पहुँची। सभी बच्चे रीना का इन्तज़ार कर रहे थे। सुनील ने उन्हें बता रखा था कि आज रीना उन्हें एक नया खेल सिखाने वाली है। रीना के आते ही सब बच्चों ने उसका तालीयों के साथ स्वागत किया। अपनी इतनी आवभगत देख रीना मन ही मन बहुत खुश हो रही थी। उसने ज़मीन पर आयताकार आकृति बनाई और खेल सिखाना शुरू कर दिया। बच्चों को इस खेल में बड़ा मज़ा आया। उन्होने रीना से आग्रह किया कि वह रोज़ाना पाठशाला आए और उन्हें यह खेल खिलाए। रीना ने इस बार बिना कुछ सोचे हाँ कह दिया। पाठशाला में मिला सम्मान उसे इजाज़त नही दे रहा था कि वह ना कह पाए।

इस घटना के आद रीना की दिनचर्या ही बदल गई। अब वह रोज़ाना बग़ैर बुलाए पाठशाला आ जाती है। और बच्चों के साथ नये-नये खेल सीखती है और सिखाती भी है। खेल ही खेल में सुनील ने उसे लिखना-पढना, हिसाब करना और अपने परिवेश के बारे में बहुत कुछ सिखा दिया।

पाठशाला ने जगाया आत्मविश्वास

आज़ाद नगर, डीग से लगभग 4 किलोमीटर दूर उत्तर-पूर्व दिशा में स्थित 8—10 घरों का एक छोटा सा गाँव है। लगभग दो दशक पूर्व कुछ परिवार नहर के किनारे जलदाय विभाग के टैंक के पास सरकारी ज़मीन पर आकर बस गए थे। जिन्होने आहिस्ता-आहिस्ता एक गाँव का रूप ले लिया। लगभग 90 की आबादी वाले इस गाँव के सभी परिवार भाट समुदाय से है। इनका मुख्य पेशा भिक्षा मांगना है। भिक्षा मांगने के लिये ये लोग पत्नी और बच्चों के साथ दूर-दराज़ के गाँवों में निकल जाते हैं। कुछ बच्चे जो माता-पिता के साथ बाहर नही जाते वे अपना पेट स्वयं पालते हैं। यह बच्चे डीग व उसके आस-पास के गाँवों में चून (आटा) मांगने जाते हैं और अपने छोटे भाई बहनों का लालन-पालन करते हैं। शनिवार के दिन ये बच्चे डीग के बाज़ार में तेल, और पैसे आदि मांगने के लिए जाते हैं। गीता भी इन्ही बच्चों में से एक है।

गीता के माता-पिता अक्सर बाहर रहते हैं। माता-पिता के गाँव से चले जाने के बाद छोटे भाई-बहनों का भरण-पोषण गीता ही करती है। वह शनिवार को आसपास के गाँवों से माँग कर लाती है और उसे पूरे हफ्ते तक घर का खर्च चलाती है। कभी-कभी तो तो सिर्फ इतना ही मिल पाता है कि दो दिन मुश्किल से कटते हैं। इतनी कम उम्र इतनी सारी ज़िम्मेदारियों का बोझ वह उठा रही थी। अपने जीवन की कठिनाईयों से उसने बहुत कुछ सीखा। उसका सपना था कि वह वह खूब पढ़े और माता-पिता का हाथ बँटाए। ताकि इस ज़िल्लत भरी ज़िन्दगी से छुटकारा मिल सके लेकिन गाँव में कोई भी विद्यालय नही था। विद्यालय गाँव लगभग दो किलोमीटर दूर दिदावली गाँव में है। आर्थिक तंगी और माता-पिता के अनपढ़ होने के कारण वह सही उम्र में विद्यालय में प्रवेश नही ले सकी। अब जब पढ़ना चाह रही थी तब वह 10 वर्ष की हो चुकी थी तथा कक्षा 1 में छोटे बच्चों के साथ बैठने उसे शर्म महसूस होती थी। यही कारण था कि उसकी ख्वाहिशें मन में ही दबी हुईं थी।

उसका यह सपना तब पूरा हुआ जब सार्ड ने सन् 2003 में गाँव की आवश्कता और माँग को देखते हुए समुदाय के सहयोग से यहाँ एक गुणात्मक शिक्षा केन्द्र की शुरूआत की, जिसका नाम 'हमारी पाठशाला' रखा। गीता की जैसे मन की मुराद पूरी हो गई थी। उसकी खुशी का ठिकाना नही था। पहले ही दिन से वह जल्दी-जल्दी घर का काम-काज निपटा कर सीधी पाठशाला पहुँच गई। शिक्षक द्वारा कराई गई हर गतिविधि को वह बहुत बड़ी गंभीरता से लेती थी। जल्दी ही वह छोटे-छोटे वाक्य बनाने लगी। 99 तक के जमा-घटा व 10 तक के पहाड़े सीख गई। उसके सीखने की गति इतनी अधिक थी कि वह कुल छः माह ही में कक्षा 1 का स्तर पार कर गई तथा दो वर्ष बाद वह कक्षा 3 की दक्षताओं में पारंगत हो चुकी थी। उसकी प्रगति को देख जुलाई 2005 में उसे राजकीय प्राथमिक विद्यालय, दिदावली की कक्षा 4 में प्रवेश दिला दिया गया। हमारी पाठशाला के ज़रिये गीता में एक नया आत्मविश्वास जाग्रत हुआ है। उसका कहना है कि वह इस आत्मविश्वास को टूटने नही देगी।

ईमानदारी का सबक

"का करेगी पढ़के। नोकरी करेगी का। छोरा होती तो भेज देतो पढ़न लू। घर को काम-काज सीख ले नही तो सुसराल वाला कहेंगा कि माँ-बाप ने कछु भी ना सिखायों।" सुनीता के लिए पिता के यह शब्द सुनना आम बात थी। वह जब भी पढ़ने की बात करती उसे डाँट कर चुप करा दिया जाता था। केवल एक माँ थी जिसके आँचल में मूँह छिपा कर वह आँसू बहा लिया करती थी। लेकिन माँ भी बेटी के सामने मजबूर थी। वह चाह कर भी अपने पति का विरोध नही कर सकती थी। कहने को वह चार बच्चों की माँ थी परन्तु एक भी पुत्र न होने के कारण उसे न जाने क्या-क्या सुनना पढ़ता था। पहले विजय सिंह का स्वभाव ऐसा नही था। वह सुनीता को बहुत प्यार किया करता था। लेकिन पुत्र के मोह ने उसे ऐसा बना दिया।

हमारी पाठशाला के शिक्षक जमशेद ने जब विजय सिंह से सुनीता को पाठशाला भेजने के लिए कहा तो उसने साफ इन्कार कर दिया। जमशेद ने समुदाय स्तरीय संगठन की बैठक में सुनीता का मुद्दा रखा। गाँव वालों के दबाव में आकर विजय सिंह बेटी को पाठशाला भेजने को तैयार तो हो गया लेकिन एक शर्त रख दी। पहले सुनीता घर का काम करेगी। खेत से न्यार लेकर आयेगी। उसके बाद समय बचा तो पढ़ने आ सकती है।

सुनीता पाठशाला आने लगी। पिता की आज्ञानुसार वह पहले घर का काम पूरा करती और फिर पाठशाला आती थी। पढ़ाई के प्रति लगन ने उसे शीघ्र ही कक्षा के श्रेष्ठ बच्चों की श्रेणी में ला खड़ा किया। इतना ही नही वह पाठशाला की सफाई व अन्य कार्यों में भी शिक्षक का हाथ बँटाती थी। कभी-कभी शिक्षक की अनुपस्थिति में वह समूह का संचालन भी किया करती थी।

शिक्षक-अभिभावक बैठक में समुदायिक कार्यकर्ता श्रीमती मीना सिंघल ने विजय सिंह के आगे सुनीता की प्रशन्सा की। विजय सिंह को अच्छा तो लगा किन्तु उसने अपनी खुशी को ज़ाहिर नही किया। लेकिन एक घटना ने बेटी के लिए उसके मन में छिपी भावना को उजागर कर दिया। घटना थी सुनीता की ईमानदारी की। सुनता को एक दिन पाठशाला जाते समय रास्ते में १०० रूपये पड़े हुए मिले। सुनीता ने पाठशाला पहुँचते ही वे रूपये जमशेद को दे दिए। जमशेद ने वे रूपये तुरन्त गाँव में जाकर मालूम किया। वे रूपये एक बुढ़िया के थे। जब उस बुढ़िया को अपने खोए रूपये मिले तो उसकी आँखों में खुशी से आँसू छलक आए। उसने सुनीता को ढेर सारी दुआएँ दी। विजय सिंह और उसकी पत्नि को दुआएँ दी। विजय सिंह इस बार अपने भावनाओं को रोक नही पाया। उसने सुनीता को गले से लगा लिया और कहा अब मुझे बेटे की कोई जरूरत नही है। मेरी बेटियाँ ही मेरे बेटे के बराबर है। उसने तय किया है कि वह अपनी बेटियों को वहाँ तक पढ़ायेगा जहाँ तक वे पढ़ना चाहेंगी। शिक्षक-अभिभावक बैठक में जब सुनीता की तारीफ हुई तो उसने इसका सारा श्रेय पाठशाला को दिया। उसने बताया कि उसे ईमानदारी का सबक जमशेद द्वारा सुनाई एक कहानी से मिला।